बी॰ए॰ भाग-3
हिन्दी-प्रतिष्ठा
काव्य-हेतु

रमेश कुमार यादव
हिन्दी-विभाग
डी॰ के॰ कालेज
डुमरॉव बक्सर (बिहार)

काव्य हेतु की अवधारणा :-

हेतु का अर्थ है 'कारण'। कवि के काव्य में काव्य-प्रणयन की सामर्थ्य उत्पन्न करने वाले साधनों को 'काव्य हेतु' या काव्य का कारण कहा जाता है। ये साधन ही कवि को काव्य-प्रणयन में सक्षम बनाते हैं।

काव्य हेतुओं का निरूपण करने वाले आचार्यों में भामह, दण्डी, वामन, रूद्रट, कुन्तक, मम्मट आदि का नाम उल्लेखनीय है। हिन्दी के रीतिकालीन आचार्यों में सूरति मिश्र, श्रीपति तथा आधुनिक युग के जगन्नाथ प्रसाद भानु आदि ने मम्मट के आधार पर ही हेतु निरूपण किया है। इनके विवेचन में मौलिकता का अभाव है।

आचार्य भामह ने तीन काव्य हेतु माने हैं- प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास। दण्डी ने भी शब्द भेद से इन्हें ही स्वीकार किया है। रूद्रट तथा कुन्तक ने भामह की 'प्रतिभा' के स्थान पर 'शक्ति' शब्द का प्रयोग किया है। आचार्य वामन की भी यही मान्यता है। राजशेखर ने 'शक्ति' को ही मुख्य काव्य-हेतु माना है। उनके अनुसार समाधि (मन की एकाग्रता) और अभ्यास-ये दोनों कवित्व शक्ति को उद्भावित करते हैं। परवर्ती आचार्य मम्मट ने तीन काव्य-हेतुओं का उल्लेख किया है और शेष सभी का अन्तर्भाव इन्हीं में माना है। ये हेतु हैं- शक्ति (प्रतिभा), लोक-व्यवहार, शास्त्र तथा काव्य आदि के अनुशीलन से प्राप्त निपुणता (व्युत्पत्ति) और काव्यज्ञ की शिक्षा से अभ्यास। पण्डितराज जगन्नाथ ने प्रतिभा को ही काव्य-हेतु माना है व्युत्पत्ति और अभ्यास, प्रतिभा के उन्मीलक हेतु हैं।

इस तरह स्पष्ट है कि संस्कृत काव्यशास्त्र में शब्द-भेद से प्रायः तीन ही हेतु स्वीकार किये गये हैं और ये हैं - प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास।

काव्य हेतुओं में प्रतिभा का स्थान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इस विषय में प्रायः सभी आचार्य एकमत हैं कि प्रतिभा ही कवित्व का बीज है। जिस प्रकार बीज के अभाव में वृक्ष की कल्पना नहीं की जा सकती उसी प्रकार प्रतिभा रहित व्यक्ति काव्य-प्रणयन नहीं कर सकता। यदि वह काव्य प्रणयन में प्रवृत्त होता है तो उसकी कृति उपहास योग्य ही होती है। आचार्य जयदेव ने प्रतिभा का महत्व प्रदर्शित करते हुए कहा है कि प्रतिभा रूपी बीज अंकुरित करने के लिए व्युत्पत्ति और अभ्यास मिट्टी और जल के समान है,

"प्रतिभैव श्रुताभ्याससहिता कवितां प्रति,
हेतुर्मृदम्बुसम्बद्ध बीजोत्पत्तिर्लतामिव।"

भट्टतौत ने प्रतिभा की व्याख्या इन शब्दों में की है- "प्रज्ञा नवनोन्मेषशालिनी प्रतिभा मता।" अर्थात नये-नये भावों के उन्मेष से युक्त प्रज्ञा को प्रतिभा कहते हैं। वाग्भट के अनुसार "प्रतिभा वह तत्व है जो कवि के हृदय में नूतन शब्दार्थ- समूह, अलंकार योजना, उक्ति वैचित्र्य तथा कल्पना वैभव आदि को जाग्रत करती है, कवि हृदय को नूतन वस्तुओं का दर्शन कराती है।

आचार्य रुद्रट ने प्रतिभा के दो भेद किये हैं- सहजा अर्थात स्वाभाविक और उत्पद्या अर्थात जो किन्हीं साधनों से उत्पन्न की जा सके। राजशेखर ने प्रतिभा दो प्रकार की बतायी है - कारयित्री और

भावयित्री। कवि का उपकार करने वाली प्रतिभा कारयि त्री कहलाती है। इसके भी तीन भेद है - सहजा, आहार्या, तथा औपदेशिकी। भावक या सहृदय का उपकार करने वाली प्रतिभा भावयित्री कहलाती है। यह प्रतिभा कवि के श्रम तथा अभिप्राय का बोध कराती है।

'व्युत्पत्ति' शब्द का अर्थ 'प्रगाढ़ पांडित्य' राजशेखर ने प्राचीन आचार्यों के मत का उल्लेख करते हुए व्युत्पत्ति का अर्थ 'बहुज्ञता' दिया है। यह बहुज्ञता' अथवा ज्ञान दो प्रकार का होता है - शास्त्रीय और लौकिक। शास्त्रीय ज्ञान अध्ययन जन्य होता है। इसके लिए भारतीय आचार्यों ने काव्यशास्त्र, छंदशास्त्र, दर्शन, व्याकरण, ज्योतिष, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, कामशास्त्र, शब्दकोश आदि का अध्ययन कवि के लिए आवश्यक माना है। लौकिक ज्ञान के अन्तर्गत लोक-व्यवहार का सूक्ष्म निरीक्षण-परीक्षण आता है। कवि का शास्त्रीय ज्ञान तभी सफल हो सकता है, जब उसे लोक-व्यवहार का अच्छा ज्ञान हो। काव्य कृति में महानता व्युत्पत्ति या लोक-शास्त्र की निपुणता के अभाव में नहीं आ सकती। अनुभूति और अभिव्यक्ति दोनों को रमणीय बनाने के लिए व्युत्पत्ति या निपुणता का होना आवश्यक है।

निरंतर प्रयास करते रहने को अभ्यास कहते है। सभी आचार्यों ने अभ्यास को प्रतिभा का पोषक माना है। काव्य में सौष्ठव लाने के लिए अभ्यास आवश्यक वस्तु है। इसके अभाव में अनेक प्रतिभायें कुण्ठित होकर नष्ट हो जाती है। अभ्यास से काव्य रचना में परिष्कार आता है। आचार्य दण्डी ने अभ्यास का महत्व स्वीकार

करते हुए कहा है कि "पूर्व वासनाजन्य अद्भुत प्रतिभा के न रहने पर भी शास्त्राध्ययन और अभ्यास से वाणी की उपासना करने पर वाणी अवश्य ही अनुग्रह करती है।"

तात्पर्य यह है कि प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास तीनों काव्य हेतु एक दूसरे के पूरक हैं। किसी एक के बिना भी काव्य - सृजन कठिन है। कोई एक अपने आप में पर्याप्त नहीं। आचार्य रुद्रट ने इसलिए तीनों को लगभग समान महत्व देते हुए कहा है - "त्रितयमिदं व्याप्रियते शक्तिर्व्युत्पत्ति रभ्यास।" कुछ लोगों ने समाधि (चित्त की एकाग्रता) को भी काव्य हेतु माना है। पर समाधि न केवल काव्य रचना, बल्कि प्रत्येक रचनात्मक कार्य के लिए आवश्यक है। अतः उसे काव्य हेतु के अन्तर्गत स्थान देना उचित नहीं।

रमेश कुमार यादव
असिस्टेंट- प्रोफेसर
हिन्दी - विभाग
डी. के. कालेज, डुमराँव
बक्सर (बिहार)